International Journal of Education, Modern Management, Applied Science & Social Science (IJEMMASSS)
ISSN :2581-9925, Impact Factor: 7.555, Volume 07, No. 02(I), April- June, 2025, pp. 71-74

गांधी, साम्प्रदायिक सहिष्णुता एवं भारतीय राजनीति

मंजू शर्मा*

सहायक आचार्य – राजनीति विज्ञान विभाग, स्व. पंडित नवल किषोर शर्मा राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, दौसा, राजस्थान।

*Corresponding Author: Sharmamanju31@gmail.com

सार

गांधी जी के अनुसार ''विभिन्न धर्म एक ही लक्ष्य को प्राप्त करने के विभिन्न मार्ग है। जब हमारा लक्ष्य एक ही है तो इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि हम उसकी प्राप्ति के लिए अलग–अलग रास्तों पर रहे है।[2]'' अगर हम बात करे विभिन्न धर्मो की तो गांधी जी ने 'हिन्दू धर्म' को सबसे अधिक सहिष्णु माना है वे कहते है कि इसमें कट्टरता का अभाव है जो मुझे बहुत पसन्द है। इससे इसके अनुयायियों को आत्माभिव्यक्ति के लिए अधिक अवसर मिलते है। हिन्दू धर्म एकांकी धर्म न होने के कारण इसके अनुयायी न सिर्फ अन्य सब धर्मो का आदर करते है बल्कि दूसरे धर्म में जो कुछ अच्छाई हो उसकी प्रशंसा भी कर सकते है। अहिंसा भी धर्मो में समान है लेकिन हिन्दू धर्म में वो सर्वोच्च रूप में प्रकट हुई है और उसका प्रयोग भी हुआ है। पुनर्जन्म की महान धारणा इस विश्वास का सीधा परिणाम है कि यह धर्म प्राणीमात्र की एकता और पवित्रता का व्यावहारिक प्रयोग है।[3] 'इस्लाम' पर गांधी जी कहते है कि अवश्य ही मैं इस्लाम को उसी अर्थ में शांति का धर्म मानता हूँ, जिस अर्थ में ईसाई बौद्ध तथा हिन्दू धर्म शांति के धर्म है। बेशक मात्रा का फर्क है, परन्तु इन सबका उद्देश्य शांति ही है।[4] भारत की राष्ट्रीय संस्कृति के लिए इस्लाम की विशेष देन तो यह है कि वह एक ईश्वर में शुद्ध विश्वास रखता है और जो लोग उसके दायरे के भीतर है उनके लिए व्यवहार में वह मानव–भ्रातृत्व के सत्य को लागू करता है। इन्हे मैं इस्लाम की दो विशेष देनें मानता हूँ। गांधी जी के अनुसार दूसरे धर्मावलम्बियों के प्रति सहिष्णुता, ईश्वर की अनिवार्य एकता में विश्वास तथा धर्म के प्रति एक ऐसा विकेकसम्मत दृष्टिकोण है कि व्यक्ति किसी अमानवीय और अविवेकपूर्ण धार्मिक विश्वास को अस्वीकार करने का साहस जुटा सके, व्यक्ति के लिए धार्मिक आचरण के जीवन्त मापदण्ड है।

शब्दकोशः *साम्प्रदायिक सहिष्णुता, भारतीय राजनीति, कौमी एकता, साम्प्रदायिक सौहाद्र, साम्प्रदायिक वैमनस्य।*

प्रस्तावना

गांधी जी के शब्दों में ''कौमी या साम्प्रदायिक एकता की जरूरत को सब कोई मंजूर करते है। लेकिन सब लोगों को अभी तक यह बात जँची नहीं कि एकता का मतलब सिर्फ राजनैतिक एकता नहीं है। मतलब सिर्फ राजनैतिक एकता नहीं है। राजनीतिक एकता तो जोर–जबरदस्ती से भी लादी जा सकती है। मगर एकता के सच्चे मायने तो है वह दिली दोस्ती, जो किसी के तोड़े न टूटे। इस तरह की एकता पैदा करने के लिये सबसे पहली जरूरत इस बात की है कि कांग्रेसजन, फिर वे किसी भी धर्म के मानने वाले हो; अपने को हिंदु, मुसलमान, ईसाई, पारसी, यहूदी वगैरह सभी कौमों के नुमाइन्दा समझे।[1]'' जीवनभर गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम का मुख्य बिंदु देश में साम्प्रदायिक सौहाद्र को विकसित करना रहा अपने जीवन के अंतिम चरण में भी गांधी जी हिंदू–मुस्लिम एकता के लिये ही प्रयासरत रहे। आज गांधी जी प्रयासों को पुनःस्मरण करने की नितांत आवश्यकता है क्योंकि नज़र उठाकर आज भारतवर्ष के किसी भी कोने में देखे तो भारत की जनता साम्प्रदायिक वैमनस्य की आग में झुलस रही है। आज आवश्यक है कि हिन्दुस्तान के करोड़ो अरबों बाशिन्दों में से हर एक

अपनेपन का, आत्मीयता का अनुभव करे यानि वे उनके सुख–दुख में अपने को दूसरे का साथी समझे। प्रत्येक भारतवासी अपने से भिन्न धर्म का पालन करने वाले के साथ निजी दोस्ती कायम करे, और अपने धर्म के प्रति उसके मन में जैसा प्रेम हो ठीक वैसा ही प्रेम वह दूसरे धर्म से भी करे।

'बौद्ध धर्म' की शिक्षा का पूरा परिणत विकास भारत में ही हुआ; इससे भिन्न कुछ हो भी नहीं सकता था, क्योंकि गौतम स्वयं एक श्रेष्ठ हिन्दू ही तो थे। वे हिन्दू धर्म में जो कुछ उत्तम है उससे ओतप्रात थे और उन्होनें अपना जीवन कतिपय ऐसी शिक्षाओं की शोध और प्रसार के लिए दिया, जो वेदों में छिपी पड़ी थी और जिन्हें समय की काई ने ढंक दिया था। बुद्ध ने हिन्दू धर्म का कभी त्याग नहीं किया, उन्होनें तो उसके आधार पर विस्तार किया। उन्होनें उसे नया जीवन और नया अर्थ दिया।

बेशक उन्होनें इस धारणा को अस्वीकार कर दिया कि ईश्वर नामधारी कोई प्राणी द्वेषवश काम करता है, अपने कर्मों पर पश्चाताप कर सकता है। पार्थिव राजाओं की तरह प्रलोभनों और रिश्वतों में फँस सकता है और उसका कृपापात्र बना जा सकता है। उनकी सारी आत्मा ने इस विश्वास के विरूद्ध प्रबल विद्रोह किया था कि ईश्वर नामधारी प्राणी को अपने ही पैदा किये हुए जीवित प्राणियों का ताजा खून अच्छाा लगता है। बुद्ध ने पुनः जो देकर इस बात की घोषणा की कि इस विश्व का नैतिक शासन शाश्वत है और अपरिवर्तनीय है।[5] 'ईसाई धर्म' के बारे में गांधी जी ने कहा कि मैं यह नहीं मान सकता कि केवल ईसा में ही देवांश था। उनमें उतना ही दिव्यांश था जितना कृष्ण,राम,मुहम्मद या जरथुस्त्र में था। इसी तरह जैसे मैं वेदों या कुरान के प्रत्येक शब्द को ईश्वर–प्रेरित नहीं मानता, वैसे ही बाइबल के प्रत्येक शब्द को भी ईश्वर प्रेरित नहीं मानता। मेरे लिये बाइबल उतनी ही आदरणीय धर्म–पुस्तक है, जितनी गीता और कुरान है।[6] विभिन्न धर्मो पर गांधी जी ने अपना मत रखते हुए यही कहाँ है कि मैं ऐसी आशा नहीं करता हूँ कि मेरे सपनों का आदर्श भारत में केवल एक ही धर्म रहेगा, यानी वह संपूर्णतः हिंदू या ईसाई या मुसलमान बन जायेगा। मैं तो यह चाहता हूँ कि वह पूर्णतः उदार और सहिष्णु बने और उसके सब धर्म साथ–साथ चलते रहे।

गाँधी का हिन्दुत्व

गाँधी जी ने स्वयं अपने जीवन में धर्म के प्रति इसी उदार और विवेकशील दृष्टिकोण को अपनाया। उन्होनें यह दावा किया कि वे निष्ठावान हिन्दू है, किन्तु साथ ही उन्होनें यह भी स्पष्ट किया कि उनका हिन्दुत्व उन्हे अनिवार्य रूप से इस बात की प्रेरणा देता है कि वे दूसरे धर्मावलम्बियों के प्रति भी समान स्नेह और सहिष्णुता का भाव रखे। उन्होनें कहाँ कि ''यदि मैं किसी मुसलमान या ईसाई को संकट में पड़ा देखूँ अथवा उसके विरूद्ध कोई अन्याय होते देखूँ अथवा उसके अन्याय का प्रतिकार करने के लिए अपने प्राणों को भी दांव पर लगा दूँ तो इससे मेरे हिन्दुत्व धर्म की सहिष्णुता को निम्न शब्दों में स्पष्ट किया है।

- मेरा धर्म हिन्दुत्त्व है किंतु मेरे लिए हिन्दुत्त्व मानवता का धर्म है, उसकी परिधि में उन सारे धर्मो के अच्छे सिद्धांत सम्मिलित है, जिन्हें मैं जानता हूँ।
- मैं अपने धर्म के प्रति सत्य अहिंसा अर्थात व्यापकतम अर्थ में प्रेम के आदर्श से प्रेरित होकर आकृष्ट हुआ हूँ।
- इस धर्म का सामाजिक जीवन में प्रभाव है इसे व्यक्ति के नित्य–नित्य के सामाजिक कार्यो का अनुभव किया जा सकता है। मेरा धर्म मुझे सिखाता है कि सेवा से अधिक प्रसन्नतादायक और कोई कार्य हो ही नहीं हो सकता है।
- गांधी जी ने स्पष्ट शब्दों में कहा कि दुनिया के अन्य धर्मो की तुलना में दुनिया के अन्य धर्मो के प्रति सहिष्णुता और आदर भाव का उदान्त मानवीय मूल्यों के प्रति समर्पण सर्वाधिक मात्रा में उपलब्ध हुआ, और इसी कारण उनकी हिंदू धर्म के प्रति आस्था दृढ़ बनी रही।

गांधी जी ने कहाँ ''मेरा हिन्दू धर्म सर्वव्यापी है। यह दूसरे धर्मो के प्रति विरोध का समर्थन नहीं करता है। वास्तवः में सभी धर्म, शाश्वत सिद्धांतों की दृष्टि से पूरक है एक दूसरे के, सही दृष्टिकोण तो यह होगा कि किसी विशिष्ट धर्म के विशिष्ट लक्षण को अपने स्वयं के धार्मिक विश्वासों के साथ ही पवित्र मानकर स्वीकार कर लेना चाहिए।[7]''

धर्म एवं राजनीति

गांधी जी धर्म एवं राजनीति के मध्य संबंध को इतना स्वाभाविक मानते थे कि स्वयं अपने विषय में उनका दावा यह था कि वे मूलतः एक राजनीतिक व्यक्ति नहीं है, अपितु राजनीति में तो उन्हें धर्म के प्रति आस्था ही खींच लायी है राजनीति में धर्म के समावेश को आवश्यक मानते हुए भी उन्होनें स्पष्ट किया कि वे राजनीति में साम्प्रदायिकता के समावेश के पक्षधर नहीं है। उन्होने कहा ''धर्म का अर्थ संकीर्ण साम्प्रदायिकता नहीं है। यह शाश्वत मानवधर्म, हिन्दुत्त्व, इस्लाम और ईसाइयत से परे जाता है। यह उनका निषेध नहीं करता, उनका विरोध भी नहीं करता।[8] वस्तुतः उन्होनें धर्म–निष्ठता को, साम्प्रदायिक सद्भाव की अनिवार्य पूर्व शर्त माना।

भारतीय राजनीति एवं साम्प्रदायिक एकता एक अपरिहार्य आवश्यकता

''मुझे इस बात में रंचमात्र भी सन्देह नहीं है कि साम्प्रदायिक मतभेदों का कुहासा आजादी के सूर्य उदय होते ही दूर हो जायेगा।[9] गांधी के इन शब्दों को आज पुनःस्मरण करे तो उनके कथन आज भारतीय राजनीति में चरितार्थ होते प्रतीत नहीं होते है। आज पूरा भारत साम्प्रदायिक वैमनस्य में जल रहा है। गांधी ने जिस हिंदू, मुस्लिम एकता के लिये जीवन भर संघर्ष किया, आज भारतीय राजनेताओं की राजनीति का केन्द्रबिंदु ही जातिगत मुद्दे है। हम आजादी के 70 साल बाद भी मंदिर–मस्जिद विवाद तक ही सीमित है। वोट बैंक की राजनीति जातिगत समीकरणों पर आधारित है। सांसदों और विधायकों की राजनीति विकास आधारित नहीं होकर धर्म एवं जाति पर सिमट कर रह गयी है। आये दिन कभी पंडितों तो कभी मौलवियों की हत्या या मारपीट की खबरें अखबारों का हिस्सा है। आज हिन्दुस्तान हिंतु–मुस्लिम सिक्ख, ईसाई, हम सब आपस में भाई–भाई वाला नारा भूल बैठा है। भारतीय संविधान जहाँ हर भारतवासी को समान मानकर समान अधिकार व अवसरों की बात करता है वहीं यह भारत का आम नागरिक स्वीकार नहीं कर पा रहा है।

अतः आज आवश्यकता है गांधी के धार्मिक एवं साम्प्रदायिक एकता एवं सहिष्णुता संबंधी कृत्यों एवं विचारों का व्यवहारिक रूप से भारतीय राजनीति में प्रयोग करने की। गांधी ने वर्णाश्रम धर्म, जात–पात, स्त्री–पुरूष अस्पृश्यता निवारण, अन्तर्जातीय विवाह एवं खान–पान, हिंदू मुस्लिम एकता तथा राजनीति का आध्यात्मिकरण पर विस्तृत प्रकाश डाला एवं जीवन भर इन कार्यो के लिये प्रयासरत रहे। 'जात–पात' पर गांधी जी के विचार थे कि जिस अर्थ में जातपाँत को नहीं मानता। यह समाज का एक 'फालतू' अंग है।[10] और तरक्की के रास्ते में रूकावट है। इसी तरह आदमी–आदमी के बीच उँच–नीच का भेद भी नहीं मानता।

'वर्ण व्यवस्था' पर उन्होनें कहा है कि वर्णाश्रम धर्म बताता है दुनिया में मनुष्य का सच्चा लक्ष्य क्या है। उसका जन्म इसलिए नहीं हुआ कि वह रोज–रोज पैसा इक्कठा करने के रास्ते खोजे और जीविका के, जन्म तो इसलिये हुआ है कि वह अपनी शक्ति का प्रत्येक अणु अपने निर्माता को जानने में लगाये। आज तो ब्राह्मणों क्षत्रियों वैश्यों, और शूद्रों के केवल नाम रह गये है। दृष्टि से देखे तो वर्णो का पूरा संकर हो गया है।[11] हम सब पूरी तरह बराबर है लेकिन बराबरी आत्मा की है शरीर की नहीं। वर्ण की रचना पीढ़ी–दर–पीढ़ी धंधों की बुनियाद पर हुई है। मनुष्य के चार धंधे सार्वत्रिक है–

विद्यादान दुःखी को बचाना खेती और शरीर की मेहनत से सेवा इन्हीं को चलाने के लिये वर्ण बनाये गये है। जब हिन्दू अज्ञान के शिकार हो गये तब वर्ण के अनुचित उपयोग के कारण अनगिनत जातियाँ बनी और रोटी–बेटी–व्यवहार के अनावश्यक बंधन पैदा हो गये वर्ण–धर्म का इनसे कोई नाता नहीं है।[12]

'अस्पृश्यता' को गांधीजी अभिशाप मानते रहे। उनकी राय में हिंदू धर्म में दिखाई पड़ने वाला अस्पृश्यता का वर्तमान स्वरूप और मनुष्य के खिलाफ बनाया गया भयंकर अपराध है। यह एक ऐसा अभिशाप है जब तक हमारे बीच रहेगा तब तक मुझे लगता है कि इस पावन भूमि में हमें जो भी तकलीफ सहना पड़े वह हमारे इस अपराध का जिसे हम आज भी कर रहे है, उचित दण्ड होगा।[13]. 'हरिजन उद्धार' कार्यक्रम गांधी जी के रचनात्मक कार्यक्रम का सर्वदा अग्रणी हिस्सा रहे। प्रारंभ में अस्पृश्यता स्वच्छता के नियमों में से एक थी यह नियम यह कि चीज गंदी हो या आदमी जो उसे छूना नहीं चाहिए लेकिन ज्यों ही उसका गंदापन दूर हो जाये तो उसे छू सकते है। इसलिये कार्य कोई भी बुरा नहीं। यह भावना हमारे अंदर बचपन से आनी चाहिए।[14]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि धर्म को गांधी जी ऐसी शक्ति के रूपमें स्वीकार करते है जो समाज को एकता के सूत्र में बाँध सकती है। धर्म की उनकी धारणा में संकीर्णता, भेदभाव और वैमनस्य के लिये कोई स्थान नहीं है। भारतीय राजनीति एवं सामाजिक व्यवस्था के आधारभूत तत्व के रूप में धर्म को उन्होनें एक ऐसी आस्था के रूप में परिभाषित किया जो समानता, सहिष्णुता और पारस्परिकता के भाव को सुनिश्चित करें। आज गांधी जी के उक्त आदर्श को भारतीय राजनीति में अम्लीजामा पहनाने की आवश्यकता है। ताकि साम्प्रदायिक एकता एवं प्रेम बना रहे तथा जाति वर्ग एवं धर्म राजनीति का आधार न होकर प्रेम सद्भाव एवं सहिष्णुता बने।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. रचनात्मक कार्यक्रम, पृ. 11–12.
2. हरिजन; 30–04–1938.
3. यंग इण्डिया, 8–9–20.
4. यंग इण्डिया; 20–01–27
5. यंग इण्डिया, 24–11–27
6. हरिजन, 6.03.37
7. हरिजन बंधु, 19.03.1933
8. हरिजन, 10.02.1940
9. यंग इण्डिया, 29–10–1931.
10. मेरे सपनों का भारत; गांधी जी, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद 2019, पृ. 263.
11. यंग इण्डिया, 8.12.20
12. वर्ण–व्यवस्था, 1981, पृ. 49–50
13. स्पीचेज एण्ड राइटिंग्ज ऑफ गांधी, पृ. 387
14. मंगल–प्रभात प्रक., 9 पृ. 43–44

❖◆❖